॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
३६७

# श्रीनेत्रतन्त्रम्

(मृत्युञ्जयभट्टारकः)

श्रीमदाचार्यक्षेमराजकृत**नेत्रोद्योत**व्याख्यानेन
**ज्ञानवती**हिन्दीभाष्येण च विभूषितम्

व्याख्याकारः सम्पादकश्च
**आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी**
व्याकरणाचार्यः
एम० ए० (संस्कृत), पी-एच्०डी०, (लब्धस्वर्णपदक)
संस्कृतविभागः, कलासङ्कायः,
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

**चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन**
वाराणसी

## (३)

## नेत्रतन्त्र : संक्षिप्त परिचय

आगमशास्त्र शिवपार्वतीसंवाद रूप हैं। नेत्रतन्त्र इसका अपवाद नहीं। इस ग्रन्थ में २२ अधिकार है। यहाँ प्रत्येक अधिकार की विषयवस्तु का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है—

**प्रथम अधिकार—**

पार्वती ने नेत्र के विषय में प्रश्न किया कि भगवन्! नेत्र तो जलमय होता है फिर उससे कालाग्नि कैसे उत्पन्न होती है? उत्तर में भगवान् का कथन है कि उनके नेत्रों में कालाग्नि और अमृत दोनों रहते हैं। इच्छा ज्ञान और क्रिया शक्तियाँ ही सूर्य अग्नि और शिव के तीनों नेत्रों का रूप धारण करती हैं। परमेश्वर ही ब्रह्मा विष्णु और रुद्र के रूप में सृष्टि स्थिति और संहार करते रहते हैं। नेत्राग्नि से समस्त संसार भस्म हो जाता है और फिर उन ब्रह्मा आदि तीन के सामरस्य से यह संसार तृप्त किया जाता है। नेत्र ही मृत्यु पर विजय प्राप्त करता है। इसीलिये नेत्र का नाम मृत्युञ्जय या मृत्युजित् है। इस अमोघ मृत्युञ्जय मन्त्र की सहायता से साधक सब कुछ प्राप्त कर सकता है।

**द्वितीय अधिकार—**

इस अधिकार में नेत्र का स्वरूप स्पष्ट किया गया है साथ ही मन्त्र (= ॐ जूं जुं सः[१]) तथा योग और ज्ञान के द्वारा उस नेत्र मन्त्र के ज्ञान का वर्णन है। इस मन्त्र की आराधना से सभी प्रकार के कायिक वाचिक और मानसिक कष्ट दूर हो जाते हैं। मन्त्र के उद्धार की विधि बतलाते हुए इस अधिकार में मृत्युञ्जय मन्त्र के बीजाक्षर, उसके हृदय, शिर, शिखा, कवच; वौषट् और फट् अङ्गों का निरूपण प्रस्तुत है।

**तृतीय अधिकार—**

इस अधिकार का विषय विशिष्ट याग है। इस याग के द्वारा मन्त्रों की सिद्धि होती है। साधक को चाहिये कि वह स्नान सन्ध्या आदि नित्य कर्मों से निवृत्त

१. इस मन्त्र के द्रष्टा ऋषि कहोल, छन्द देव्यादि गायत्री, देवता मृत्युञ्जय महादेव, शक्ति जूं और कीलक क्लीं है।

होकर यागमण्डप में गणेश आदि की पूजा करें । तत्पश्चात् विघ्नों का अपसारण करते हुए प्राणायाम आदि के द्वारा अपने अन्तःकरण को शुद्ध करे । इसके बाद अपने इष्टदेव का ध्यान करते हुए सौम्य रौद्र और भीम आकृतिवाले सदाशिव तुम्बुरु और भैरव का ध्यान, उनकी मानस पूजा और ब्रह्मपूजन करना चाहिये । तदनन्तर मण्डल में भगवान् का आवाहन, हवन आदि तथा कुण्डनिर्माण और उसका संस्कार, वागीशी का आवाहन, वह्निसंस्कार, स्रुक्, स्रुवा, पीठ वेदी के निर्माण की विधि इस अधिकार में बतलायी गयी है । अन्त में हवनीय घृत का संस्कार बतलाते हुए कतिपय काम्य होमों का वर्णन किया गया है ।

**चतुर्थ अधिकार—**

इसका विषय भोग-मोक्षप्रदायिनी दीक्षाविधि है । वर्ण मन्त्र पद कला तत्त्व और भुवन की दीक्षा का उल्लेख तथा दीक्षाविधि का संक्षिप्त परिचय देने के बाद दीक्षाविधि के विस्तृत परिचय को अन्यत्र अर्थात् स्वच्छन्द तन्त्र में देखने की बात कही गयी है ।

**पञ्चम अधिकार—**

यहाँ अभिषेक विधि की प्रस्तावना के बाद आठ, पाँच, तीन और एक कलश की स्थापना की आध्यात्मिक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है । मन्त्रसाधन की विधि को बतलाते हुए मन्त्र के जप द्वारा अनेक सिद्धियाँ इस अधिकार का अवशिष्ट वर्ण्य विषय है ।

**षष्ठ अधिकार—**

इस अधिकार में भगवान् मृत्युञ्जय की आराधना के स्थूल सूक्ष्म और पर उपाय या योग का वर्णन है । इसके अतिरिक्त याग होम जप ध्यान मुद्रा आदि स्थूल उपायों की भी चर्चा की गयी है ।

**सप्तम अधिकार—**

सूक्ष्म उपायों के वर्णन में यहाँ छह चक्र, सोलह आधार, तीन लक्ष्य, पाँच व्योम, बारह ग्रन्थि, तीन शक्ति, तीन धाम, तीन नाड़ी, दश नाड़ी, बहत्तर हजार एवं साढ़े तीन करोड़ नाड़ियों की चर्चा की गयी है । इनका ज्ञाता साधक दिव्य देह को प्राप्त करता है । वह मृत्युञ्जयी हो जाता है । शक्ति का आरोहावरोहक्रम, खेचरी मुद्रा और शिव-शक्ति की सामरस्यमयी स्थिति को बतलाते हुए अन्त में कहा गया कि यह सूक्ष्म उपाय कालजयी है । इसके अनुसार जीवनयापन करने वाले योगी से मृत्यु बहुत दूर रहती है ।

ये चार उस यामल स्वरूप के द्वारपालक हैं । अन्त में विभिन्न प्रयोगों को दृष्टि से रखकर विभिन्न द्रव्यों के स्वरूपों का वर्णन किया गया है ।

**एकादश अधिकार—**

उत्तर तन्त्र (= वाममार्ग) के अनुसार भगवान् के तुम्बुरु स्वरूप की आराधना इस अधिकार का वर्ण्य विषय है । उनके ध्येयस्वरूप की चर्चा करने के बाद यह बतलाया गया कि उनकी चारों दिशाओं में जम्भिनी, मोहिनी, सुभगा और दुर्भगा नामक दूतियाँ, क्रोधन, वृन्तक, गजकर्ण और महाबल नामक किङ्करसमूह, दायें बायें क्रमशः गायत्री और सावित्री की स्थापना करनी चाहिये । जया विजया अजिता और अपराजिता नामक देवीकुल तथा उपर्युक्त दूती आदि के ध्यान का वर्णन करते हुए उनके वाहन, अस्त्र आदि की चर्चा भी कही गयी है । अन्त में रक्षा और शान्ति के लिये महाबली चक्रराज के विधान का वर्णन है ।

**द्वादश अधिकार—**

यहाँ कुलाम्नाय (= कौल) पद्धति से याग होम जप आदि का विधान बतलाने के बाद कमल के मध्य में भैरव और पूर्व आदि दिशाओं में ब्रह्मा आदि की ब्राह्मी आदि आठ देवियों का स्वरूप, आयुध, और आसन के साथ वर्णन किया गया है । इनकी आराधना से राजा सहित कृषक आदि सभी वर्ग के लोग इष्ट फल प्राप्त करते हैं । अधिकार के अन्त में काम्य होम के लिये विशिष्ट द्रव्यों का उल्लेख है ।

**त्रयोदश अधिकार—**

इसमें जयाख्यसंहिता की पद्धति से नारायण के स्वरूप तथा जया लक्ष्मी कीर्ति और माया नामक इनकी देवियों का विधान उल्लिखित है । उसके बाद सौर संहिता की रीति से सूर्य आदि का ध्यानपूजन वर्णित है । गारुड, भूततन्त्र आदि तथा न्याय जैन योग आदि सम्प्रदायों में वर्णित देवतायें तथा कार्त्तिकेय काम आदि सभी उपास्य देवता एक ही भगवान् के अनेक आकार हैं । इनकी पूजा सन्देहरहित होकर करनी चाहिये । यह सावधानी रखनी चाहिये कि पूजाविधि का साङ्कर्य न होने पाये । अधिकार के अन्त में कहा गया कि मृत्युञ्जय के एक बार के ध्यान पूजन आदि से सब प्रकार की सिद्धि हस्तगत होती है और राष्ट्र श्रीवृद्धि को प्राप्त करता है ।

**चतुर्दश अधिकार—**

इस अधिकार में यह प्रश्न उठाया गया कि यदि एक ही मन्त्र से सब सिद्ध

ये चार उस यामल स्वरूप के द्वारपालक हैं । अन्त में विभिन्न प्रयोगों को दृष्टि से रखकर विभिन्न द्रव्यों के स्वरूपों का वर्णन किया गया है ।

**एकादश अधिकार—**

उत्तर तन्त्र (= वाममार्ग) के अनुसार भगवान् के तुम्बुरु स्वरूप की आराधना इस अधिकार का वर्ण्य विषय है । उनके ध्येयस्वरूप की चर्चा करने के बाद यह बतलाया गया कि उनकी चारों दिशाओं में जम्भिनी, मोहिनी, सुभगा और दुर्भगा नामक दूतियाँ, क्रोधन, वृन्तक, गजकर्ण और महाबल नामक किङ्करसमूह, दायें बायें क्रमशः गायत्री और सावित्री की स्थापना करनी चाहिये । जया विजया अजिता और अपराजिता नामक देवीकुल तथा उपर्युक्त दूती आदि के ध्यान का वर्णन करते हुए उनके वाहन, अस्त्र आदि की चर्चा भी कही गयी है । अन्त में रक्षा और शान्ति के लिये महाबली चक्रराज के विधान का वर्णन है ।

**द्वादश अधिकार—**

यहाँ कुलाम्नाय (= कौल) पद्धति से याग होम जप आदि का विधान बतलाने के बाद कमल के मध्य में भैरव और पूर्व आदि दिशाओं में ब्रह्मा आदि की ब्राह्मी आदि आठ देवियों का स्वरूप, आयुध, और आसन के साथ वर्णन किया गया है । इनकी आराधना से राजा सहित कृषक आदि सभी वर्ग के लोग इष्ट फल प्राप्त करते हैं । अधिकार के अन्त में काम्य होम के लिये विशिष्ट द्रव्यों का उल्लेख है ।

**त्रयोदश अधिकार—**

इसमें जयाख्यसंहिता की पद्धति से नारायण के स्वरूप तथा जया लक्ष्मी कीर्ति और माया नामक इनकी देवियों का विधान उल्लिखित है । उसके बाद सौर संहिता की रीति से सूर्य आदि का ध्यानपूजन वर्णित है । गारुड, भूततन्त्र आदि तथा न्याय जैन योग आदि सम्प्रदायों में वर्णित देवतायें तथा कार्त्तिकेय काम आदि सभी उपास्य देवता एक ही भगवान् के अनेक आकार हैं । इनकी पूजा सन्देहरहित होकर करनी चाहिये । यह सावधानी रखनी चाहिये कि पूजाविधि का साङ्कर्य न होने पाये । अधिकार के अन्त में कहा गया कि मृत्युञ्जय के एक बार के ध्यान पूजन आदि से सब प्रकार की सिद्धि हस्तगत होती है और राष्ट्र श्रीवृद्धि को प्राप्त करता है ।

**चतुर्दश अधिकार—**

इस अधिकार में यह प्रश्न उठाया गया कि यदि एक ही मन्त्र से सब सिद्ध

हो जाता है तो शास्त्रान्तरीय मन्त्रों की क्या आवश्यकता है? उत्तर में कहा गया कि परमेश्वर ने सर्वप्रथम अपने को यामलरूप में रचित किया । तत्पश्चात् इसी यामल रूप से मन्त्रों की सृष्टि हुई । यह सम्पूर्ण सृष्टि मन्त्रनाथ का विलास है। सात करोड़ मन्त्र इस महामन्त्र के द्वारा आद्यन्त निरोधित हैं । जब ये समस्त मन्त्र मन्त्रराज से सम्पुटित होते हैं तब वीर्यवान् बनते हैं । यह रहस्य परम गोपनीय है ।

**पञ्चदश अधिकार—**

रक्षोघ्न धूप की चर्चा से इस अधिकार का प्रारम्भ किया गया । रक्षोघ्न धूप का आधार-द्रव्य सरसो है । 'सर्षप' पद की व्युत्पत्ति बतलाते हुए इसके 'सिद्धार्थक' 'नीराजन' नामों की भी चर्चा की गयी है । यह सर्षप चतुर्युगानुरूप श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण भेद से चार प्रकार का होता है । वर्तमान में इसके पीत और रक्त रूप ही मिलते हैं । आगे कुछ काम्यप्रयोगों का वर्णन कर अन्त में मन्त्रराज के माहात्म्य का वर्णन करते हुए यह बतलाया गया कि मन्त्र सभी प्रकार की सिद्धियों को किस प्रकार देते हैं ।

**षोडश अधिकार—**

कालिकाल में अनेक प्रकार के दु:खों से त्रस्त मानवों की मुक्तिहेतु सरल उपाय पूछे जाने पर यह बतलाया गया कि मृत्युञ्जय मन्त्रराज ही समस्त सङ्कटों का एकमात्र निवारक हैं । मृत्युञ्जय की यजनविधि को बतलाते हुए यागस्थान का वर्णन कर उसको गुप्त रखने का आदेश दिया गया है क्योंकि हिंसक लोग मन्त्र में दश प्रकार की बाधाएं डालते हैं । वे बाधायें हैं—'मन्त्रों का कीलन, भेदन आदि । आगे चलकर ग्रन्थ में आचार्य या गुरु की विशेषताओं का वर्णन करते हुए यह कहा गया कि योग्य आचार्य द्वारा प्रदत्त मन्त्र ही भोग-मोक्षप्रद होते हैं । आचार्य तीन प्रकार के होते हैं—कर्मी, योगी और ज्ञानी । इनमें ज्ञानी गुरु सर्वश्रेष्ठ होता है । ऐसे गुरु के द्वारा दीक्षित शिष्य के समस्त पाप धुल जाते हैं और वह परमपद को प्राप्त होता है । निर्मल आचार्य के द्वारा प्रदत्त मन्त्र भी निर्मल होते हैं । फलत: वीर्यसम्पन्न वे मन्त्र इष्टसिद्धि प्रदान करते हैं । ऐसे ही मन्त्र शान्ति, पौष्टिक आदि कर्मों को सफल बनाते हैं । अन्त में अनेक काम्य प्रयोगों का वर्णन कर बताया गया कि शिष्य का कर्त्तव्य है कि वह भक्तिभाव से अपने गुरु की पूजा करें ।

**सप्तदश अधिकार—**

यहाँ चक्रराज के लेखन और पूजन की विधि बतलायी गयी है । इस

चक्रराज का प्रयोग सर्वविध रक्षा और पुष्टि आदि के लिये करना चाहिये । अन्त में कतिपय काम्य प्रयोगों का वर्णन किया गया है ।

**अष्टादश अधिकार—**

इस अधिकार में मन्त्रसिद्धि से सम्बद्ध बाधाओं, कृत्या, खाखोंद आदि के निवारण के सन्दर्भ में उपाय तथा प्रत्यङ्गिरा के प्रयोग के सम्बन्ध में देवी पार्वती के द्वारा प्रश्न किया गया है । उत्तर में भगवान् ने कहा कि मन्त्रवाद का सम्यक् ज्ञान कर सिद्ध किये गये मन्त्रों की सहायता से समस्त कार्य सम्पन्न होते हैं । मन्त्रों में शक्ति के आधान की विधियाँ निम्नलिखित रूप में बतलायी गयी हैं—

मन्त्र के ९ प्रकार — दीपन, बोधन, ताडन आदि ।

मन्त्र के ११ प्रयोग — सम्पुट, ग्रथित, ग्रस्त, समस्त आदि ।

मन्त्र के ४ भेद — सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध अरि ।

इसके अतिरिक्त मन्त्रों के उदय, अस्त, व्याप्ति, ध्यान, मुद्रा आदि के स्वरूप का ज्ञान करके ही मन्त्रों में शक्ति का आधान करना चाहिये । इसके बाद श्रीयाग के विधान का विस्तृत वर्णन है । इसमें चौकोर मण्डल आदि बनाने को कहा गया है । श्रीयाग की फलश्रुति का सविस्तर वर्णन करते हुए यह बतलाया गया कि युद्धकाल में इसका प्रयोग विजय दिलाता है और शत्रुओं के द्वारा उपस्थापित सभी बाधायें दूर हो जाती हैं । इसका अनुष्ठान अत्यन्त गोपनीय तथा अपनी श्रद्धा के अनुसार शैव वैष्णव आदि किसी भी पद्धति से किया जा सकता है । मोक्ष के लिये एकवीर पद्धति अर्थात् एकमात्र अमृतेश की उपासना अपनानी चाहिये । यह महालक्ष्मी याग चिन्तामणि रत्न के समान सर्वकामपरिपूरक है । भोगेच्छु के भोग की सिद्धि के लिये लक्ष्मीयाग का अलग प्रकार बतलाया गया है । प्रसङ्गवश यह कहा गया कि जैसे सभी नदियाँ समुद्र में पहुँच कर समरस हो जाती हैं उसी प्रकार पशु भी नाना भोगों का रसास्वादन कर अन्त में शिव के साथ समरस हो जाता है । अधिकार के अन्त में विषदान आदि के कारण घटित अपमृत्यु की शान्ति के लिये कतिपय आनुष्ठानिक प्रयोग वर्णित हैं ।

**ऊनविंश अधिकार—**

यहाँ देवी के द्वारा प्रश्न किया गया कि मातायें, योगिनियाँ आदि मनुष्यों स्त्रियों और विशेषतया बालकों को जो पीड़ित करती हैं तो उनसे रक्षा का उपाय क्या है? उत्तर में कहा गया कि दैत्यों ने जब देवताओं को सताना शुरु किया तब इन्द आदि देवताओं की प्रार्थना पर परमेश्वर ने स्वच्छन्द भैरव का रूप धारण कर राक्षसों के विनाश के लिये माताओं आदि की सृष्टि की । दैत्यों का नाश

करने के बाद भैरव से प्राप्त अजेय वरदान से उन्मत्त मातायें आदि स्थावर जङ्गमात्मक जगत् को पीड़ित करने लगी । पुनः देवताओं आदि की प्रार्थना पर परमेश्वर ने माताओं आदि के कृत्यों के सम्पादनार्थ सीमा बाँध दी । जिस स्थान में अशास्त्रीय कृत्य सम्पादित किये जाते हों, अनेक प्रकार के अनाचार होते हों; जहाँ सन्ध्या-वन्दन आदि नित्यकर्मों से रहित द्विजाति के लोग रहते हों वहाँ पहुँच कर वे मातायें पीड़ा पहुँचा सकती है । परमेश्वर ने आगे बतलाया कि छायाछिद्र आदि से ग्रस्त होने पर उसका तुरन्त उपचार करना चाहिये । इस क्रम में मातृगण विनायक आदि की तुष्टि के लिये याग पूजन बलि आदि का विधान करना आवश्यक है । इस परिस्थिति में मृत्युञ्जय मन्त्र का अनुष्ठान श्रेयस्कर होता है । अनुष्ठान के समय सामान्य नियमों का पालन करते हुए अपने परिवार, राज्य के राजा आदि भिन्न-भिन्न वर्ग के लिये भिन्न-भिन्न विशिष्ट अनुष्ठान की चर्चा की गयी है । आगे चलकर इस अधिकार में अस्त्रयाग, नीराजन प्रयोगों को बतलाते हुए गो अश्व आदि की रक्षा तथा दुर्भिक्ष आदि उपद्रवों की शान्ति एवं राष्ट्र की श्रीवृद्धि के लिये अनेक उपायों का वर्णन किया गया है ।

प्रश्न है कि यह किसकी रक्षा का विधान है? आत्मा की रक्षा का हो नहीं सकता क्योंकि वह नित्य है ? शरीर तो नश्वर ही है फिर उसकी रक्षा का प्रयास ही व्यर्थ है? उत्तर में कहा गया कि पुरुष यद्यपि सूक्ष्म निर्गुण नित्य है तथापि आणव मायीय और कार्म मलों से युक्त होने के कारण वह अशुद्ध हो गया है। इसीलिये वह पीड़ित होता है । अतः वह रक्षणीय है । आगे शिव की अनुग्रह शक्ति तथा उसके अनेक स्वरूपों का वर्णन करते हुए यह कहा गया है कि दीक्षा के द्वारा त्रिविध मलों का शोधन कर उसकी रक्षा की जा सकती है । इसी बीच यह भी बतलाया गया कि जीवरक्षा शरीररक्षा दोनों आवश्यक है । उक्त रक्षा-द्वय के अतिरिक्त आधार, बीज आदि आठ वस्तुओं की भी रक्षा अवश्य करणीय है। नेत्रनाथ के ऊपर सत्ययुग त्रेता आदि का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । जिस किसी भी समय अपनी-अपनी भावना के अनुरूप इस नेत्रनाथ का भजन करने से यह चिन्तामणि की भाँति अभीष्ट फल देता है । अतः सब लोगों को इस मन्त्र की उपासना करनी चाहिये ।

**विंश अधिकार—**

पिछले अधिकार में योगिनी, माता आदि के द्वारा पशुओं के प्राणहरण की बात कही गयी । प्रश्न है कि किस प्रयोजन को दृष्टि में रखकर वे ऐसा करती हैं? उत्तर में ईश्वर ने कहा कि इस क्रूर कर्म में इनका कोई स्वार्थ नहीं है । वे मात्र मेरी आज्ञा का पालन करती हैं । उनका यह कृत्य राग या द्वेष के कारण

नहीं होता। यह ध्यान रखना चाहिये कि इस ब्रह्माण्ड में एक महायज्ञ निरन्तर चल रहा है। सृष्टि स्वयं एक यज्ञ है। इसमें भगवान् की आज्ञानुसार बलि दी जाती है। जिन पशुओं (= मनुष्यों) की बलि योगिनी आदि के द्वारा दी जाती है वे अनेक प्रकार के पाशों से मुक्त होकर ऊर्ध्व लोकों में पहुँच जाते हैं। योगिनी आदि का यह कृत्य त्रिविध योग-पर सूक्ष्म स्थूल-के द्वारा सम्पादित होता है। परयोग की प्रक्रिया से जिनका वध होता है वे मलत्रय से रहित होकर व्यापक शिव तत्त्व में विलीन होते हैं। उनका शरीर-धारण नहीं होता। इसी क्रम में यहाँ त्रिविध योग की व्याख्या की गयी है और कहा गया है कि इनमें से किसी भी एक योग से शरीरत्याग होने पर प्राणी का कल्याण ही होता है। मन्त्र का प्रयोग शास्त्रनिर्दिष्ट उचित स्थान में ही करना चाहिये। अनुचित स्थान में एवं लोभ क्रोध आदि के कारण प्रयोग करने वाला नरक में जाता है। इसलिये अत्यन्त सावधान होकर इसका प्रयोग करना चाहिये। इस मन्त्र का प्रयोग लोकमङ्गल के लिये ही करना चाहिये। मोक्षेच्छु साधक को चाहिये कि वह मन्त्रपद्धति का सहारा न ले। शाकिनी आदि हिंस्त्र जीवात्मायें अनेक उपायों से इस पाञ्चभौतिक शरीर का नाश करती हैं। स्थूल शरीर को स्थूल योग से और सूक्ष्म शरीर को सूक्ष्म योग के द्वारा मुक्त कराना चाहिये। आगे चल कर भगवान् ने मन्त्रों की रचना का उद्देश्य बतलाते हुए कहा कि इस विषय में अत्यन्त सावधान रहना चाहिये। मन्त्रों के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करते हुए अन्त में मृत्युञ्जय मन्त्र का माहात्म्य बतलाया गया है।

**एकविंश अधिकार—**

प्रश्न है कि मन्त्र न शिवात्मक हो सकते हैं और न शक्त्यात्मक। वे आणवात्मक भी नहीं हो सकते। इन विकल्पों के अतिरिक्त कोई चौथा विकल्प है नहीं फिर मन्त्रों की अद्भुत शक्तिसम्पन्न कैसे कहा गया? उत्तर में शिव का वचन है कि शिव आदि तीन तत्त्वों के अतिरिक्त संसार में और कुछ है ही नहीं इसलिये मन्त्र त्रितत्त्वात्मक ही हैं। आगे चलकर इस जगत् की त्रितत्त्वात्मकता का विस्तृत वर्णन किया गया है। आपातत: शिव शक्ति और अणु ये तीन तत्त्व दृष्ट होते हैं किन्तु परमार्थत: एक ही तत्त्व है। शक्ति जगत् का उपादान कारण है और शिव निमित्त कारण। यह परा शक्ति सूर्य और उसकी उष्मा की भाँति शिव से अभिन्न है। शक्ति सानन्द है और शिव निरानन्द। इसी प्रकार उन दोनों में और भी अपारमार्थिक भेद हैं। मन्त्र भी चित्तत्त्वात्मक है। इसके बाद उन्मना समना आदि तथा नादरूपी शब्द ब्रह्म की अनेक अवस्थाओं का वर्णन करते हुए यह बतलाया गया कि मन्त्रों का स्वरूप शिवात्मक है। इनका शक्त्यात्मक रूप 'अ' से लेकर 'क्ष' तक ५० वर्णों वाली सूक्ष्मा मध्यमा वाक् है। इसी मध्यमा

से सारे मन्त्र उद्भूत होते हैं । इतना वर्णन करने के बाद इस अधिकार में अमृतेश, मृत्युञ्जय और भैरव पदों की निरुक्ति बतलाते हुए मन्त्रपद का निर्वचन किया गया है । मन्त्रों की शिवात्मकता आदि की पुन: पुष्टि करते हुए उनकी आणवात्मकता का निरूपण किया गया । अन्त में मन्त्रों की सिद्धि के उपायों— मन्त्र, ध्यान, मुद्रा, दीक्षा, मण्डल आदि का सविस्तर वर्णन प्रस्तुत है ।

**द्वाविंश अधिकार—**

यहाँ देवी ने प्रश्न किया कि परमेश्वर के ही द्वारा असंख्य मन्त्रों का उपदेश दिये जाने पर भी मृत्युञ्जय मन्त्र ही सर्वोत्तम क्यों माना गया? उत्तर में भगवान् ने नेत्रतन्त्रात्मक मृत्युञ्जय मन्त्र की उत्कृष्टता का कारण बतलाते हुए नेत्र पद की व्याख्या की और कहा कि नेत्र तत्त्व से ही समस्त मन्त्रों की उत्पत्ति होती है। इसी कारण मन्त्र भी अमोघशक्ति से सम्पन्न होते हैं । मन्त्रनाथ के अनेक अक्षरों की व्याप्ति का वर्णन करते हुए षडध्व, षट्कारण, प्रणव, कला आदि को बतलाकर लयावस्था साभास-निराभास अवस्था का वर्णन किया गया है । इसके बाद अकार से लेकर उन्मना पर्यन्त नादकलाओं, सद्योजात से लेकर ईशानपर्यन्त पञ्चवक्त्रकलाओं तथा इनके स्वरूप का वर्णन प्रस्तुत है । समनापर्यन्त पाशजाल का भेदन करने वाला ही शिवपद की प्राप्ति का अधिकारी है । शिव की निराभास दशा का ज्ञाता ही मन्त्रों के रहस्य को जान सकता है । मन्त्रों का उदय, उनकी व्याप्ति आदि को जो जानते हैं, मन्त्र उनके किङ्कर हो जाते हैं । उन ज्ञानी जनों के सामर्थ्य से वे मन्त्र भोग-मोक्षप्रद होते हैं । यह सब एक मात्र मृत्युञ्जय मन्त्र की आराधना से सम्भाव्य है । अधिकार के अन्त में नेत्रतन्त्र के अधिकारी और अनधिकारी पुरुषों का उल्लेख है ।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि इस ग्रन्थ का मुख्य प्रतिपाद्य नेत्रतत्त्व है । इसके अन्य नाम मृत्युजित् तथा अमृतेश भी हैं । इस नेत्रतत्त्व को जानने के तीन उपाय हैं—मन्त्र योग और ज्ञान । इनमें ज्ञानोपाय सर्वश्रेष्ठ है । इसके अनुसार आचरण करने वाला साधक या योगी ऐहिक और आमुष्मिक दोनों फलों को प्राप्त करता है ।

# विषयानुक्रमणिका

# विषयानुक्रमणिका

ग्रहरक्षाविधानम्, रक्षातत्त्वनिर्णयः, त्रिविधो मलः, विकल्पमात्रः संसारः, मलत्रयोपेतः पशुः, शक्त्याऽवियुक्तः शिवः, कृत्यभेदेन शक्तेरघोरादयो भेदाः, रक्षा-दीक्षापद-निरुक्तिः, जीवरक्षादिकम्, भूतविनिर्णयः, अष्टविधा रक्षा, मृत्युजिन्माहात्म्यम् ।



योगिनीशाकिन्यादिविषयकः प्रश्नः, पशवः पतियागार्थं सृष्टाः, त्रिविधेन योगेन पशूनां योजनम्, परयोगेन दीक्षायाः शिवत्वमुपलभ्यते, मरणलक्षणम्, सूक्ष्म-योगेन पशूनां मोक्षणम्, स्थूलयोगेन पाशवपुरपातनम्, सिद्धमन्त्रो योगी परेषामपि मोचकः, उत्तमां सिद्धिं मोक्षं वेच्छता मन्त्रवादो न कर्त्तव्यः, जीवानां नृपत्या-दीनामनुग्रहार्थमेव मन्त्रवादः कार्यः, जगतां रक्षणाय परमेशेन मन्त्रौषधक्रियायोगा उपदिष्टाः, मृत्युजित् सर्वमन्त्रेश्वरः समाख्यातः ।



मन्त्राः किमात्मका इत्यादिकाः प्रश्नाः, तत्त्वत्रयं विना मन्त्रो वक्तुं न शक्यते, शिवात्मकाः शक्तिरूपा आणवाश्च मन्त्राः, शक्तित्रयनिरूपणम्, मातृका-स्वरूपविमर्शः, शिवस्य पञ्चविधं कृत्यम्, शक्तिपञ्चकम्, त्रितत्त्वविमर्शः, षड्विधा चतुर्भेदा च सृष्टिः, निमित्तकारणं देवः शक्तिश्चोपादानकारणम्, अकामतः सर्वं चराचरं शक्तिसहचरितः शिवः सृजेत्, सर्वे मन्त्रास्त्रितत्त्वजा इति विषयोपसंहारः, उन्मना, समना, कुण्डला च शक्तिः, ध्वनिरूपः स्फोट एव नादः, निरोधिनी, बिन्दुरर्धचन्द्रश्च, मातृका, मृत्युजिद्भैरवपदयोर्निरुक्तिः, मननत्राणधर्माणो मन्त्राः, मन्त्राणां शिवशक्त्यात्मरूपत्वम्, मन्त्रो ध्यानं मुद्रा च, दीक्षामण्डलादिकमस्यैव प्रपञ्चः ।



मृत्युञ्जयमन्त्रस्य श्रेष्ठत्वविषयकः प्रश्नः, शिवस्वरूपनिरूपणम्, अस्मादेवा-मोघशक्तयो मन्त्राः समुत्पन्नाः, नेत्रमन्त्रनिर्वचनम्, मन्त्रनाथस्याक्षरव्याप्त्या श्रेष्ठत्वनिरूपणम्, कारणषट्कनिर्देशः, षट्त्यागात् सप्तमे लयः, प्रणवस्य सामयाः कलाः, निराभासमनुत्तमं परतत्त्वम्, कारणलयप्रकारः, सद्योजातादिकलानिरूपणम्, स्थूलाध्वनिरूपणम्, सूक्ष्माध्वनिरूपणम्, अर्धचन्द्र-निरोधिका-नाद-शक्ति-व्यापिनी-समनाकलाः, तत्त्वत्रयव्याप्तिः, आत्मभूता मन्त्राः, शक्तिस्था मन्त्रा भोगमोक्षप्रदाः, शिवीभूताः शिवप्रदाः, अमृतेशस्य मृत्युजिद्भैरवस्य माहात्म्यम्, साधकस्यामृतेशत्वा-वाप्तिः, पात्रापात्रनिर्णयः, फलश्रुतिः ।